RESEARCH EXPRESSION ISSN 2456-3455 Vol. II, Issue 2 and 3, March and September 2017

भारतीय संस्कृति पर वैश्वीकरण का प्रभाव

सुचित्रा शर्मा*
समाजशास्त्र विभाग, शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग, (छग).

शोध सारांश

वैश्वीकरण समाजवैज्ञानिकों, वैज्ञानिकों, राजनीतिक–आर्थिक चिन्तकों तथा अन्य बुद्धिजीवियों के बीच बड़ी बेबाकी से प्रयोग में लाया जा रहा है। हालाँकि यह सच है कि परिवर्तनों के इस तीव्र दौर में समाज का हर पहलू वैश्वीकरण की प्रक्रिया की चपेट में है। संस्कृति और समाज के प्रत्येक पहलू पर इस प्रक्रिया का प्रभाव दिखाई देता है। संस्कृति के सभी पक्ष चाहे भौतिक हों या अभौतिक, वैश्विक स्तर पर संचार के साधनों और तकनीक से जुड़ गये हैं। इससे संस्कृति संवाद की प्रक्रिया नये और आसान रूप में रूपान्तरित होने लगी है। जहाँ हमारी आदतें, रुचि, क्षमताएँ, कला, विश्वास अधिकतर बुजुर्ग या बड़े लोगों से प्रदत्त व प्रभावित हुआ करती थीं। वहीं आज पुरानी व्यवस्था नई व्यवस्था में बदल पुस्तकें, टी.वी. कार्यक्रम, मीड़िया, सोशल मीडिया और इंटरनेट से संचालित होने लगी हैं।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने संस्कृति के बहुत से हिस्सों को व्यापारिक और व्यावसायिक बना दिया है। उपभोग और नई जीवन शैली ने सभी तरफ से प्रभावित किया है। वैश्विक प्रक्रिया ने भारतीय सांस्कृतिक उपादानों पर क्या प्रभाव डाला है। प्रस्तुत शोध पत्र में यही जानने का प्रयास किया गया है जो कि द्वितीयक तथ्यों के अवलोकन और विश्लेषण पर आधारित है।

कुंजी शब्दः वैश्वीकरण, पश्चिमीकरण, संस्कृति संवाद, सांस्कृतिक उपादान।

भूमिका

तकनीकी रूप से संस्कृति एक जटिल अवधारणा है। तात्विक रूप से प्रत्येक समाज की अपनी एक निजी संस्कृति होती है। यदि कोई समाज है तो उसकी कोई न कोई संस्कृति जरूर होगी और यदि कोई संस्कृति है तब समाज भी होगा ही। समाजशास्त्र के विद्यार्थी के रूप में हम सब इस अर्थ से अच्छी तरह परिचित हैं कि मानव पैदा होते समय एक जैविकीय अवयव मात्र होता है। उसकी मूल प्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं और हरकतें नैसर्गिक। संस्कृति तक उसमें पैदा भी नहीं हुई होती।

परिवार व अन्य संस्थाओं के संपर्क में आने पर बच्चे में संस्कृति का प्रवेश होता है। जैसा सामाजिक परिवेश होगा वैसी ही संस्कृति के बीच वह जीवन जीने लगता है और समाज में रहने योग्य बनता चला जाता है। इस संबंध में प्रकाशित **'द ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट, 1999'** में कहा गया है कि दुनिया भर की संस्कृति संकट के दौर से गुजर रही है। एल.पी.जी. (उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण) जैसी प्रक्रियाओं ने संस्कृति के विलोपन से परिवर्तनों को प्रेरित किया है जो कहीं न कहीं एक संकेत है, खतरे की सूचना है।

संस्कृति पर आघात केवल भारत में ही नहीं बल्कि सभी देशों में परिलक्षित हो रहा है। भारत में इसकी गति कुछ ज्यादा ही तेज दिखाई दे रही है, जिसके कारण हमारी परम्परागत संस्कृति प्रभावित हो रही है। उदाहरणस्वरूप महाराष्ट्र का तमाशा, राजस्थान का आल्हाउदल, गुजरात का गरबा, पंजाब का भांगड़ा और छत्तीसगढ़ की पंडवानी इन प्रक्रियाओं के आगोश में अपने मूल रूप को खोने लगी हैं। स्थिति आज जटिल से जटिलतर होती जा रही है। अतः इस दिशा में गंभीर चिन्तन व मनन करने की आवश्यकता है।

अध्ययन का उद्देश्य

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने संस्कृति के व्यापक हिस्से को व्यापारिक और व्यावसायिकता की चपेट में ले लिया है। उपभोग और नई जीवन शैली ने सांस्कृतिक तत्वों को प्रभावित कर सकारात्मक और नकारात्मक परिणामों को जन्म दिया है। इस वैश्विक प्रक्रिया ने भारतीय संस्कृति के पहलुओं को किस तरह प्रभावित किया है, इन्हीं बिन्दुओं को द्वितीयक तथ्यों के अवलोकन और विश्लेषण से जानने का प्रयास ही इस शोधपत्र का उद्देश्य है।

*Corresponding Author: Email: suchitrasharma12@gmail.com • Mobile No. 09424128806

भारतीय संस्कृति और वैश्वीकरण–विश्लेषण

दि ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट ने माना कि वैश्वीकरण ने दुनियाँ भर के लोगों के लिए रचनात्मकता के सभी द्वार खोल दिये हैं। विचार और ज्ञान दूर–दूर तक पहुँच गये हैं।

आज वैश्वीकरण एक आम शब्द है जिसका उपयोग हर कोई कर रहा है। वैश्वीकरण एक ऐसा रोडरोलर है जिसके नीचे हमारी संस्कृति कराह रही है। विदेशी संस्कृति का जो हमला हमारी संस्कृति पर हुआ है उसने राव तहस–नहस कर दिया है। संस्कृति और वैश्वीकरण की प्रक्रिया के प्रभावों को जानने के पूर्व इन संप्रत्ययों की व्याख्या सगीचीन है।

संस्कृति क्या है

क्लूखान ने **कल्चर एड बिहेवियर (1962)** में कहा है कि संस्कृति जीवित रहने की एक प्रणाली या डिजाइन है। राल्फ लिण्टन ने अपनी कृति **द स्टडी आफ मैन (1936)** में लिखा है–समाज की संस्कृति समाज के सदस्यों की जीवन पद्धति है। विचारों और आदतों को लोग एक दूसरे से सीखते हैं। इसमें भागीदारी करते हैं और इसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाते हैं।

अतः यह बात स्पष्ट होती है कि समाज या समूह का सदस्य संस्कृति की प्रामाणिकता पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं उठाता, उस पर विश्वास करता है और मान लेता है। टायलर क्रोबर, बीरस्टीड, स्पेन्सर, मारग्रेट मीड, मैलिनोवास्की, रूथ बेनेडिक्ट और लिण्टन आदि के अध्ययन संस्कृति की न केवल विशद् व्याख्या करते हैं बल्कि हमारी सोच को स्थायित्व प्रदान करते हैं।

वैश्वीकरण क्या है

इसका अर्थ स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि यह शब्द नया है और इसके विस्तार का इतिहास अधिक से अधिक 30 वर्ष तक का है। अस्सी के दशक में इस शब्द का प्रचलन प्रारंभ हुआ। समाजशास्त्रियों ने इस प्रक्रिया की परिभाषा अलग–अलग ढंग से की है। गिडिंस (1990) ने इसे दूर से होने वाली क्रिया (Action at a Distance), हार्वे (1989) ने समय तथा स्थान के सिकुड़ने की क्रिया (Time Space Compression), ओहमे (1990) ने अन्तर्निर्भरता को तेज गति प्रदान करने की क्रिया तथा कैसेल्स (1996) ने जागृति उत्पन्न करने की क्रिया (Networking) के रूप में परिभाषित किया। गिडिन्स ने 2007 में भारत में लकड़वाला मेमोरियल लेक्चर हाल में अपने भाषण में आज की दुनिया को पहेली जैसी अजीबो–गरीब और सिकुड़ती हुई दुनिया कहा। इनका मानना है कि वैश्वीकरण का संबंध आधुनिकता के प्रसार से है। पूँजीवाद, औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण के बढ़ते राष्ट्रों और राज्यों के परिप्रेक्ष्य में एक ऐसा नेटवर्क उभरा है जो आज वैश्वीकरण का प्रतीक है।

राबर्टसन (1992) का मानना है कि वैश्वीकरण वस्तुतः जनचेतना का हिस्सा है। वाटर्स (2001) ने वैश्वीकरण को सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था कहा है जो किसी भौगोलिक सीमा से बंधी हुई नही हैं। टर्नर (1990) के अनुसार वैश्वीकरण एक ऐसा सुघड़ शब्द है जिसका अर्थ है विश्व समाज का निर्माण।

अतः वैश्वीकरण एक प्रक्रिया है जो वस्तुतः संचार व्यवस्था, यातायात और सूचना तकनीक में हुई बहुत अधिक प्रगति का परिणाम है। स्पॉन (1996) आधुनिकीकरण तथा वैश्वीकरण को सामाजिक परिवर्तन की दो बड़ी शक्तियों के रूप में स्वीकारते हैं। अन्त में एल्ब्रो की परिभाषा समीचीन है। उनके अनुसार–वैश्वीकरण का संदर्भ उन सभी प्रक्रियाओं से है जिससे विश्व के सभी लोग एक विश्व समाज में सम्मिलित हो जाते हैं जिसे वैश्विक समाज कहा जा सकता है।

विश्लेषणात्मक व्याख्या

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने संस्कृति के सभी उपादानों और पक्षों पर अपना प्रभाव डाला है। संचार के साधनों और उन्नत तकनीक के चलते वैश्विक स्तर पर संस्कृति संवाद की प्रक्रिया नये और आसान रूप में रूपान्तरित होने लगी है। नये मूल्यों का जन्म, नई राजनीतिक व्यवस्थाओं का प्रसार, जनसंचार और सूचना के साधनों का अधिक उपयोग और नये उपभोक्ता प्रतिमानों का आयाम आदि सभी ने कहीं न कहीं वैश्वीकरण प्रभावित संस्कृति को गति दी है। योगेन्द्र सिंह ने **सोशल चेन्ज इन माडर्न इंडिया (1992)** में वैश्वीकरण के सामने भारतीय समाज की बहुलता तथा सांस्कृतिक विविधताओं के स्वरूपों की चर्चा की है। व्यापक वैश्वीकरण ने व्यापक परिवर्तन किये हैं, जिसे इलेक्ट्रानिक मीडिया के विस्तार ने हवा दी है। संस्कृति का आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव ने भारतीय संस्कृति की मौलिकता पर प्रहार किया है। भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी स्थानीय और परम्परागत संस्कृति पर यथावत् विद्यमान है। वैश्वीकरण ने इनके समक्ष संभावनाओं के द्वार खोले हैं। टेलिविजन ने ज्ञान, मनोरंजन और सूचना प्रसारण ने वैश्विक आधारों को आम लोगों के लिए परोसा है।

संस्कृति के जो नये रूप उभरे हैं उन्हें नाम देना एक दुरूह कार्य है। पाश्चात्य संस्कृति इन रूपों की वाहिका है जैसे आज अपने द्वारा उत्पादित सामानों को बेचने हेतु मल्टीप्लैक्स संस्कृति इसका उदाहरण है। जीवन के नये रूपों, मूल्यों, नई जानकारियाँ, जीवनशैली ने नये परिप्रेक्ष्यों को परिलक्षित किया है, तो कुछ चुनौतियाँ भी उभरी हैं।

सबसे बड़ा परिवर्तन तो यह हुआ है कि जहाँ हमारी आदतें, रुचि, क्षमताएँ, कला, विश्वास, पहले अधिकतर बुजुर्गों या बड़े लोगों से प्रदत्त और प्रभावित हुआ करती थीं, वहीं आज इनका स्थान पुस्तकें, टी.वी. कार्यक्रम, मीडिया, विशेषज्ञ, सोशल मीडिया और इंटरनेट संस्कृति संवाद के स्रोत बन गये हैं।

सोशल मीडिया के माध्यम से वैश्विक संस्कृति के प्रचार व प्रसार को जानने हेतु बेयर्स (1990) की समीक्षा समीचीन है। उनका मत है कि इंटरनेट शक्तियाँ कई उदाहरण को प्रस्तुत करने में सहायक होती हैं। 19वीं और 20वीं शताब्दी में यूरोप और पाश्चात्य जगत में पनपी पश्चिमीकरण की अवधारणा ने लोगों में तकनीकी क्षमता वाला प्रशासनिक तंत्र जैसी सामाजिक व्यवस्था को स्थापित किया। परिणामस्वरूप संचार की नई प्रणाली अधिक व्यवस्थाएँ, राजनैतिक, कानूनी, वैधानिक, धार्मिक, कलात्मक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य और मीडिया के नये स्वरूप समाज और संस्कृति में दृष्टिगोचर हुए।

आज हम पाते हैं कि वैश्वीकरण से जहाँ एक ओर विकास के नये आयामों को दिशा मिली है। परम्परागत स्वरूप और व्यवस्थाएँ नये और आधुनिकतम रूप में समाज और संस्कृति को भौतिक प्रगति की ओर ले जा रही हैं। वहीं इस बात की आशंका भी प्रबल हुई है कि हमारी भारतीय संस्कृति अपने प्राचीनतम और सर्वांगीण विकास के स्वरूप को खो न दे।

नई संचार व्यवस्था और मीडिया ने भी संस्कृति पर गहरा असर डाला है। वैश्विक मीडिया ने सांस्कृतिक उपादानों को प्रभावित किया है। विश्व आर्थिक बाजार की तरह संस्कृति का भी एक बाजार पैदा हो गया है। कुछ समाजशास्त्री ऐसा भी मानते हैं कि इस प्रक्रिया ने न केवल संस्कृति के स्वरूपों/आकारों को बदला है; साथ ही उन्हें एक नये आकार और नये चित्र में ढाल दिया है।

पिछले दशकों या कहें शताब्दी से यह हो रहा है कि लोग कई कारणों से एक सांस्कृतिक क्षेत्र से दूसरे सांस्कृतिक क्षेत्र में जाकर बस जाते हैं; चाहे वह मजदूरी हो, काम–धंधे की तलाश हो या दूसरी जगह बसने की इच्छा हो। कई स्थानों पर इस प्रवास या अप्रवास की स्थितियों ने हमारे सांस्कृतिक मूल्यों, जनरीतियों को प्रभावित किया है। इन व्यवस्थाओं के चलते हमारा सांस्कृतिक परिदृश्य बदलता जा रहा है। वैश्वीकरण ने जहाँ लाभप्रद स्थितियाँ पैदा की हैं वहाँ चुनौतियाँ भी पैदा की हैं।

- सबसे पहला प्रहार कृषि व्यवस्था पर, जो हमारा आधार है, परिणामस्वरुप कृषक आत्महत्याओं की बढ़ती दर। कृषि में कमी और मजदूरी में वृद्धि परिणामस्वरूप गाँवों से पलायन की स्थिति।
- धनाढ्य और गरीबों के बीच का बढ़ता अंतर।
- गैर बराबरी की अवधारणा, भौतिक एवं विलासिता पर जीवन आधारित होने से स्वास्थ्य और जीवन प्रत्याशा में गिरावट।
- राज्यों में अंतर, प्रजातांत्रिक नुकसान।
- अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा के संदर्भ में वृद्धि तो ग्रामीण बुनियादी शिक्षा से हटता ध्यान।
- समय और फासले में वृद्धि।

अंततः यह बात आज हमारे जेहन में उभरती है कि यह वैश्वीकरण हमारे लिए उपलब्धि है या कोई आयातित संकट। एल्ब्रो का मानना है कि इस प्रक्रिया को भली–भाँति समझने की आवश्यकता है। संभावनाओं पर हमने ज्यादा ध्यान दिया है, यह एक बहुआयामी प्रक्रिया है। इसके परिणाम एक दूसरे से जुड़े हैं। एक ओर इसके कारण जहाँ जीवन स्तर बढ़ रहा है वहीं दूसरी ओर उपभोक्तावाद पर सवार कॉरपोरेट साम्राज्यवाद अपने पैर पसार रहा है। इस साम्राज्यवाद को पूँजीवाद कह सकते हैं।

वैश्विक टी.वी. प्रसार से सभी के विचार और संदेश चाहते–न चाहते हुए भी उन लोगों के पास पहुँच जाते हैं जिनके पास इन संदेशों को पहुँचाने में बड़ी सावधानियों की आवश्यकता होती है। ब्लाई (2005) ने एक प्रश्न भी इस संबंध में उठाया है कि वस्तुतः इसके दो रूप दिखाई देते हैं– वैश्वीकरण एक शुभ संकेत है या विश्व समाज के लिए भयावह। यह सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव नहीं बल्कि विवाद है जिनके अपने–अपने तर्क दिये जा सकते हैं। भविष्य में वैश्वीकरण किन संभावनाओं को जन्म देगा, कुछ कहा नहीं जा सकता। पर यह तय है कि वैश्वीकरण का दरवाजा खुला है और हम वहाँ खड़े हैं।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण सकारात्मक अंत की ओर बढ़ती प्रगति है, यह परिहार्य है, अवैयक्तिक प्रक्रिया है, इसका उद्देश्य संस्कृति को शक्तिहीन करना नहीं बल्कि सांस्कृतिक भावना का विस्तार है।

Works Cited

1. Linton, Ralf (1936). "The Study of Man; Appleton, NewYork.
2. Giddens, Anthony (1999). Runaway World, Cambridge, Polity Press.
3. Harvey, D. (1989). The Condition of Post Modernity: An Inquiry into Origin of Cultural Change. Oxford: Blackwell.
4. Oftmal, K. (1998). The Borderless World, London: Collins.

5. Castells, M .(1996). The Information Age: Economy Society and Culture,3 Vol. Oxford: Blackwell.
6. Robertson, A. (1992). Globalization, Social Theory and Global Culture. London; Sage Publication.
7. Waters, Malcom (2001). Globalization, New York: Routlage
8. Turner, B. (1990). The Two Face of Sociology: Global or National ?" in M. Featherstone (ed.) Global Culture, London: Sage Publications.
9. Spohn, W. (1996). The Transformation in Global Historical and Comparative Perspectives in Social Practice and Social Transformation' ISARC, 9 Feb.
10. Albrow, M. (1990). 'Introduction' in M. Albrow and L.Kind (eds.) Globalization, Knowledge, and Societies, London: Sage Publications.
11. Singh, Yogendra (1992). Social Change in Modern India: Identity and Globalization, Jaipur: Rawat Publications.
12. Beyer, P. (1990). Privatization and Interference of Religion in Global Society' in M. Featherstone, (ed.) Global Culture, London: Sage Publications.
13. Bly, M.E. (2005). Globalization: A Matter of Antiquity", Current Society.Vol. 53. No.6.
14. Srinivas M.N. (1972). "Social Change in Modern India", New Delhi: Orient Longman.